

# अपनिषदों की कहानियाँ

## STORIES OF UPANISHADS

(BILINGUAL : HINDI-ENGLISH)



जयकिशनदास सादानी  
भारतीय विद्या मन्दिर

ज्ञानपीठ पुरस्कार सम्मानित  
पद्मभूषण तथा राष्ट्रपति सम्मान प्राप्त  
महामहोपाध्याय विद्यावाचस्पति विद्यामार्तण्ड  
प्रो. सत्यव्रत शास्त्री



पूर्व अध्यक्ष, द्वितीय संस्कृत आयोग, भारत सरकार  
सम्मानित आचार्य ( प्रोफेसर एमेरिटस ),  
दिल्ली विश्वविद्यालय  
अभ्यर्हित आचार्य, विशिष्ट संस्कृत अध्ययन केन्द्र,  
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली  
पूर्व कुलपति, श्री जगन्नाथ संस्कृत विश्वविद्यालय,  
पुरी ( ओडिशा )  
महत्तर सदस्य, साहित्य अकादेमी, नई दिल्ली  
महत्तर सदस्य, भूमध्यसागरीय अध्ययन अकादमी,  
ऐप्रिगेण्टो ( इटली )

## प्राक्कथन



भारतीय संस्कृति में अभिरुचि रखने वालों के लिए उपनिषदों की कहानियों की पुस्तक प्रस्तुत करते हुए मुझे बड़ी प्रसन्नता हो रही है। हमारी यह प्राचीन समृद्ध परम्परा रही है कि सूक्ष्म और दार्शनिक एवं तर्क सम्मत जटिल विचारों को समझाने के लिए कहानियों और रूपकात्मक घटनाओं का प्रयोग किया जाय। सूक्ष्म और गहन चिन्तन को सही परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत करने की यह विधा रही है। इस पद्धति का वेदों, उपनिषदों, पुराणों, रामायण और महाभारत में विपुल प्रयोग हुआ है। यह तो भारत के प्राचीन ज्ञान की कुंजी है, लेकिन ज्ञान को जन-जन के सामने लाना आवश्यक है और वह भी उस शैली में जिसे सभी सहज रूप से समझ पाएँ। इसी दिशा में यह प्रयास है।

अच्छी कहानी के लिए यह आवश्यक है कि उसकी प्रस्तुति भी सुरुचिपूर्ण हो। उसमें अभिरुचि निरन्तर रहनी चाहिए। उसका शैक्षणिक तत्त्व मात्र अन्तर्प्रवाह की तरह न रहकर उसका बहिर्गमन भी हो। मूल लेखक के लिए भी इसको बनाए रखना कठिन है और जो कथानक की पुनःरचना करते हैं उनके लिए तो यह और भी कठिन है। एक नए रूप में कहानी को प्रस्तुत करना, जिसमें वह मूल कहानी से रंचमात्र भी भिन्न न हो और इसके उपरांत वह कहानी एक स्वतंत्र कहानी की तरह लगे अपने आप में चुनौती भरा कार्य है। इसके लिए पूरी कल्पनाशीलता के साथ मौलिक की अभिव्यक्ति करनी होती है। श्री जयकिशनदास सादानी ने इन दोनों कार्यों का पूर्ण

रूप से निर्वाह किया है। इस पुस्तक में उपनिषदों की कहानियों को उन्होंने पूर्ण रूपेण अभिव्यक्त किया है और उनमें वर्णित उद्भावनाओं को बड़े मनोयोग के साथ प्रस्तुत किया है।

यह खेदजनक हो सकता है लेकिन यह वस्तुस्थिति है कि हमारी वर्तमान पीढ़ी अपनी जड़ों से द्रुत गति से दूर होती जा रही है। उसे अपनी अस्मिता की ओर मोड़ना व उससे परिचित कराना अत्यन्त आवश्यक है। उपदेश एक सामान्य साधन हो सकता है लेकिन इससे उसमें आस्था बनाना कठिन है, विरोध की संभावनाएँ अधिक हैं। अतः प्रत्यक्ष रूप से न कहकर परोक्ष रूप में कहना ही अधिक उत्तम व सफल रहता है। वर्तमान पीढ़ी को प्राचीन ज्ञान का रसास्वादन कराना हो तो उसे इस रूप में प्रस्तुत करना चाहिए जिसे वह सहज रूप में आत्मसात कर लाभान्वित हो सके।

इस पुस्तक का पहले अंग्रेजी में प्रकाशन हुआ था और अब हिन्दी में हो रहा है जिससे कहानियों का मर्म समाज के उन लोगों तक भी पहुँच जाय जो संस्कृत साहित्य और उसकी समग्रता से परिचित न हों। यह तभी संभव हो सकता है जब हम इस विशाल साहित्य में से ऐसे उदात्त संदर्भों को उनके लिए रोचक पद्धति से प्रस्तुत करें जिससे वे इसका आनंद ले सकें। यदि ऐसा संभव होता है तो यह पुस्तक अपने कार्य में सफल होगी।

वेदों के अंतिम भाग होने के कारण उपनिषदों को वेदान्त कहा जाता है। वे तो वास्तव में चिंतन करने की पद्धति प्रस्तुत करते हैं। वेदों के ज्ञान काण्ड, कर्मकाण्ड व इसके पूर्व में रचित संहिता और ब्राह्मण और तत्पश्चात् आरण्यकों से उपनिषद् भिन्न हैं। उपनिषदों में शिष्य गुरु के समीप बैठते हैं। उपनिषद् शब्द का अर्थ है—उप+नि+सद् या निकट बैठना। यहाँ गुरु शिष्यों को उदात्त दार्शनिक चिन्तन करने की पद्धति और इनमें निहित गूढ़ प्रश्नों का अर्थ समझाते हैं। इन कहानियों में अनेक गुरु और शिष्यों का संवाद बड़े ही मार्मिक ढंग से प्रस्तुत हुआ है। इसे आधुनिक शिक्षा पद्धति भी अपनाती है। विषय की गंभीरता के कारण इसके निगूढ़ रहस्य को समझाने में कभी-कभी कठिनाई प्रतीत होती है। अतः इसे स्पष्ट करने के लिए वे उन्हें कथाओं, रूपकों एवं उदाहरणों द्वारा पढ़ाते थे। ये कहानियाँ सर्वथा मिथकीय नहीं हैं। ये वास्तव में उन घटनाओं को विवेचित करती हैं जो परंपरा से प्राप्त हुई हैं। वे सामाजिक स्तर पर महत्वपूर्ण हैं, विशेष रूप से समाजशास्त्रियों के

लिए। ये कहानियाँ मानव के कई पहलुओं पर प्रकाश डालती हैं। जैसे सत्यकाम जाबालि कोई काल्पनिक पात्र हो यह जरूरी नहीं है। हो सकता है कि वह उस युग की बची हुई परम्परा से जुड़ा हुआ हो जहाँ समाज में एक पुरुष और एक नारी का सम्बन्ध सामाजिक स्तर पर आवश्यक न माना जाता हो। यहाँ जन्म के आधार पर वर्ण निश्चित न होकर गुणों पर आधारित था। वैसे ही श्वेतकेतु, पिता के अत्यधिक प्रेम के कारण शिक्षा प्राप्त नहीं कर पा रहा था अतः उसे ज्ञान-प्राप्ति के लिए अन्य गुरु के पास भेजना आवश्यक हो गया था। अनेक विषयों की शिक्षा एवं निपुणता प्राप्त करने के कारण उसे दंभ और अभिमान हो जाता है जो आवश्यक ज्ञान-प्राप्ति के लिए बाधक होता है। अतः इसे मिटाना बहुत जरूरी हो गया था। पिता आरुणि एवं श्वेतकेतु का संवाद उल्लेखनीय है। इसी प्रकार संवाद एवं उपदेश द्वारा परम आध्यात्मिक तत्त्व गुरु द्वारा शिष्य को समझाया जाता था जिसका सामाजिक, दार्शनिक और नैतिक मूल्य जीवन में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। उपनिषदों की कहानियों में प्रतिपादित ज्ञान अमूल्य धरोहर के रूप में हमें प्राप्त हुआ है, जिसने परवर्ती काल में पुष्पित और विकसित साहित्य का रूप ले लिया। सूक्ष्म और संक्षिप्त संवादों में विवेचित सत्य देश और काल की सीमा लॉघ जाता है। श्री जयकिशनदास सादानी, जिन्होंने अनेक पुस्तकें लिखी हैं, में यह विशेषता है कि वे प्राचीन को नवीनतम रूप में प्रस्तुत करते हैं। उनकी प्रांजल कलम न केवल सर्जन करती है अपितु प्राचीन का नवीन रूप में पुनःसर्जन कर देती है। यह क्षमता इस पुस्तक में पर्याप्त रूप में उभरी है। उपनिषद् की कहानियों को पुनः उस रूप में प्रस्तुत किया गया है जिससे उनमें नवीन अर्थवत्ता आ गयी है। इन्हें पढ़ना बड़ा ही सुखद रहा। यह एक कलाकृति होने के कारण सदा आनन्द प्रदान करती रहेगी।

—प्रो. सत्यव्रत शास्त्री

सी 248, डिफेंस कोलोनी  
नई दिल्ली-110024

पूर्व प्रोफेसर संस्कृत, दिल्ली विश्वविद्यालय,  
भू.पू. कुलपति : श्री जगन्नाथ विश्वविद्यालय,  
पुरी, ओडिशा



ज्ञानपीठ पुरस्कार सम्मानित  
पद्मभूषण तथा राष्ट्रपति सम्मान प्राप्त  
महामहोपाध्याय विद्यावाचस्पति विद्यामार्तण्ड  
प्रो. सत्यव्रत शास्त्री



पूर्व अध्यक्ष, द्वितीय संस्कृत आयोग, भारत सरकार  
सम्मानित आचार्य (प्रोफेसर एमेरिटस),  
दिल्ली विश्वविद्यालय  
अभ्याहित आचार्य, विशिष्ट संस्कृत अध्ययन केन्द्र,  
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली  
पूर्व कुलपति, श्री जगन्नाथ संस्कृत विश्वविद्यालय,  
पुरी (ओडिशा)  
महत्तर सदस्य, साहित्य अकादेमी, नई दिल्ली  
महत्तर सदस्य, भूमध्यसागरीय अध्ययन अकादमी,  
रेग्रिगेण्टो (इटली)

## FOREWORD



I have great pleasure in introducing to the lovers of Indian culture the present work on the stories of the Upanisads. It has been a time honoured practice in India to explain some of the abstruse and abstract points of metaphysics and logic with the help of narratives and anecdotes.

They have served as the means to get at the subtle points in their appreciation in proper perspective. The system has consistently been followed in texts like the Brahmanas, the Upanisads, the Ramayana, the Mahabharata and the Puranas. As keys to the age-old wisdom of India they need proper notice of the people in a style they could appreciate. This is precisely what is sought to be attempted in the present monograph.

Proper presentability is the prime requisite of a good story. Interest in it has not only to be created, it has to be sustained all through. The educative content of it has to flow out of it and not flow into it. This is demanding enough even for an original story writer but is formidable for its reteller. He has the unenviable task of presenting it in a new setting without deviating in the main from the original narrative. Further, he has to re-tell each narrative as a unit independent

in itself, outside the base of the context in which it appears in the original. This may well strain all his ingenuity and innovativeness. Shri Jaikishandas Sadani has pressed both these to the full in the present case and has come out with a monograph which reproduces Upanisadic stories in all their vivid contours.

Regrettable though it may be, it is a fact that the present generation is fast moving away from its moorings. To bring it back to them is a deeply-felt desideratum. Sermons would be too crude a means to achieve this. They may cause diffidence, if not revulsion. An indirect approach in this is more likely to succeed than the direct one. The present generation needs to taste the ancient wisdom in an expression it can appreciate. And that is the motivating force behind the present attempt.

The medium used here is English for the idea is to reach through it those sections of society, in particular, which not being familiar with Sanskrit may not have an access to the old literature of India and all that it embodies. When something of it is dished out to them in an attractive lay-out, they may feel drawn to it and may be, they like to have something more of it. If that happens, the present monograph would have more than served its purpose.

Forming the last part of the Veda-alternately called Vedant for that reason, the Upanisads represent the thinking process, the *Jnanakanda* in contradistinction to the ritualism, the *Karmakanda* of the earlier part of it, the *Samhitas*, the *Brahmanas*, and the *Aranyakas*. Herein the teacher and the taught sit close to each other - that is the literal meaning of the word *upanisad*: *upa* + *ni* + *sad*, to sit (*sad*) very close (*upa* + *ni*), the teacher explaining the high philosophy and the taughts raising queries to elicit more information about certain points for their better grasp. A lot of knowledge changes hands through this method, which being conversational even modern pedagogy appreciates quite well. All that the teacher is called upon to

explain is not clear, or perhaps cannot be clear by the nature of the topic which has a lot of mystique in it. He has, therefore, to take recourse to legends and anecdotes to bring his point home. The legends and the anecdotes may not all be just myths, some imaginary stories. They may well represent some actual happenings which tradition sought to preserve and may have a particular relevance to a sociologist in unravelling many a mystery of human existence. Satyakama Jabala may not just have been a legendary figure. He might have been the remnant of the age when one-man one-woman relationship would not have become the norm in society, when merit and not birth was still accorded the premium. So would have been Shvetaketu who would not take to studies under the fondling care of his father, howsoever, learned he might have been, and had to be sent out to another teacher for education which when acquired had inflated his ego to the extent of making him proud and conceited in achieving mastery over a number of lores and which needed to be curbed in preparation for acquiring true knowledge. In the same vein the other stories, dialogues and parables are revelatory of profound spiritual truths, with far reaching impact on the philosophical, sociological and moral values of great significance.

The stories of the Upanisads have, therefore, appeal for points more than one. They also represent a genre of writing that was taking shape in hoary past and which was to flower into a finished literary form in the later periods. Short and the crisp dialogues have an air of reality about them and in their appeal transcend time and space.

Shri Jaikishandas Sadani, a reputed author of many a work, has a knack of presenting the old as if it were very new. With his facile pen he not only creates but also re-creates what had already been in existence. In the present monograph this faculty of re-creation of his has asserted itself in full. The stories of the Upanisads have been re-

told here in a manner that they have acquired a new shade thereby. It is indeed a treat to go through the present work which being a piece of art is a joy for ever.

*C-248, Defence Colony  
New Delhi-110024*

—**Prof. Satya Vrat Shastri**  
*Ex-Professor of Sanskrit  
University of Delhi  
Ex-Vice-Chancellor,  
Shri Jagannath Sanskrit  
University, Puri, Odisha.*





**PUBLISHER**  
**BHARATIYA VIDYA MANDIR**  
12/1, Nellie Sengupta Sarani  
Kolkata - 700087  
Mob. : +919830559364

ISBN 978-81-89302-61-0



9 788189 302610

₹ 400/-